॥ ओ३म् ॥

भक्ति मार्ग

लेखक

स्वामी

रघुनाथ शर्म्मा

BY

SWAMI

Raghu Nath Sharma.

इम्पीरियल नेटिव प्रेस देहली में
बाबू रघुवरदयाल के प्रबन्ध से छपी ॥

मिती चैत्र कृष्णा ६ शनिवार
सम्वत् १९७१

॥ प्रार्थना ॥

सच्चिदा नन्देश्वरायनमः । सच्चिदानन्द आनन्द कन्द असुरारी वनविहारी भगवानकी प्राप्तिके लिए भक्ति एक मुख्य साधन माना है और सब साधन गौण माने गए हैं यदि वास्तविक देखाजाय तो विदित होता है कि आत्मा परमात्मा से एक न होजांय अर्थात् उसकी इच्छा के आधीन न होजायें तब तक जीवन में कोई भी आनन्द नहीं और अपनी वासना स्थूल हो वा सूक्ष्म किंचित् भी नहीं रहनी चाहिये केवल परमात्मा की इच्छा को परम इच्छा समझकर उसको पालन करना और अपने मिथ्या अहंका उस में विस्मरण करना ही अन्तिम पद है भगवत् को त्याग किसी वस्तुका आश्रय न लेना किन्तु तन, मन, प्राण और आत्मा को भगवत् से उत्पन्न हुए जान और उसी के आधार समझ उसी में लीन कर देना ही जीवन का लक्ष्य है कोई कर्म करे वह भगवत् अर्पण हो ऐसे भक्ति योगद्वारा व्यवहार और परमार्थ में कुछ अन्तर नहीं रहता वह जीवन मुक्त हो जाता है सो उस भक्तिका संक्षेपतः विवरण आप लोगों के हस्तगत किया जाता है सच्चे प्रेम से पढ़ो ॥

ओ३म् तत्सत्

॥ ओ३म् ॥

❀ भक्तिमार्ग ❀

॥ अनिर्वचनीयं प्रेम स्वरूपम् ॥

भक्तिका अनिर्वचनीय प्रेम स्वरूप है मूका स्वादनवत् गूंगे के स्वाद की तरह उसका आनन्द वर्णन नहीं किया जाता यथा श्रुतिः—

समाधि निर्धूत मलस्य चेतसो निवेश यन्नात्मनि यत्सुखं भवेत्। न शक्यते वर्णा यन्तु गिरा ॥ समाधि द्वारा चित्त के मल छूट जाने पर परमेश्वर में चित्त के लग जानेपर जो सुख होता है वह वाणी से कहा नहीं जाता क्योंकि उसको स्वयं आत्मा शुद्धान्तः करण से ग्रहण करता है "अमृत स्वरूपा शान्तस्वरूपाच" और भक्ति का अमृत स्वरूप और शान्तिस्वरूप है "प्रकाश्यते कापि पात्रे" यथा-व्रज गोपिकानाम्, यह भक्ति किसी पात्र में प्रकाशमान होती है जैसे व्रज गोपियों में "नास्ति तेषु जाति विद्या रूप कुल धन क्रिया भेदः" उस भक्ति के प्राप्त होने में जाति विद्या,रूप,कुल,धन और क्रिया का भेद नहीं है जैसा कि:—

व्याधस्या चरणं ध्रुवस्यचवयोः विद्या गजेन्द्रस्यकिं।
कुब्जाया किं नामरूप मधिकं किं तत् सुदाम्नो धनंम् ॥

बंधः को विदुरस्य यादवपते रुग्रस्य किं पौरुषम्।
भक्त्या तुष्यति केवलं नच गुणैर्भक्तिः प्रियोमाधवः ?॥

स्त्री और पुरुष का भेद नहीं, जैसा कि भगवद्वचन है परन्तु जो भगवान की शरण लेते हैं वह चाहे पापी से भी पापी क्यों नहीं और उनकी कैसी भी नीच योनि हो वह भी परमपद मोक्षको प्राप्त होते हैं यथाः—

अपि चेदसि सुदुराचारो भजते मामनन्य भाक्;।
साधुरेवसः मन्तव्य सम्यग् व्यवसितोहिसः॥

अत्यन्त दुराचारी भी एक निश्चय से मेरा भजन करेगा तो उसे भी निश्चित साधु ही समझना चाहिये क्यों कि उसका निश्चय अच्छा हैः—

मांहि पार्थ विपाश्रित्य येपिस्युः पाप योनयः।
स्त्रियो वैश्या स्तथा शूद्राः तेपि यान्ति परां गतिम्॥

जो पाप योनियां हैं वह भी मेरा आश्रय करें, वह भी परम पद मोक्ष को प्राप्त हों उसी प्रकार स्त्री, वैश्य, शूद्र, कोई भी मुझको आश्रय करके संसृति चक्र में नहीं पड़ता प्रत्युत परम पदको प्राप्त होता है और भी कहा हैः

अद्वेष्टा सर्व भूतानां मैत्रः करुण एवच।
निर्ममो निरहंकारः सम दुःखः सुखः क्षमी॥
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़ निश्चयः।

मय्यर्पित मनो बुद्धिर्योमे भक्तः समेप्रियः ॥

सब भूतों मे द्वेष रहित सबका मित्र और दयालुरहे अहंकार से रहित सुख दुःख में समान चित्तवाला क्षमावान् और सदैव सन्तोषी है स्थिर चित्त और मनका संयमी है और जिसका दृढ निश्चय है और जिसने अपना मन बुद्धि मुझको अर्पण करदी है वह मेरा भक्त है वह मुझे प्रिय है:—

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरुः ।
मामे वैष्यसि युत्क्वैव मात्मानं मत्परायणः ॥

मेरे मन वाला हो मेरा भक्त बन मुझको नमस्कार कर मुझको ही प्राप्त होजावेगा इस प्रकार अपने आप को मेरे परायण कर, यही भक्ति है और भी कहा है

ब्रह्मण्या धाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोतियः ।
लिप्यतेन सपापेन पद्म पत्र मिवाम्भसा ॥

जो पुरुष कर्म फल की कामना छोड़ कर्मों को ब्रह्मके अर्पण करता है वह पाप से इस प्रकार लिप्त नहीं होता। जैसे पानी से कमल का पत्र लिपायमान नहीं होता नारद सूत्र में भी कहा है (तदर्पिता अखिला चारता) [तद्विस्मरणे परं व्याकुलता] उस परमात्मा के अर्पण अपने सम्पूर्ण कर्मों को करदेवे और उसके विस्मरण में

परं व्याकुलता होवे तो जब जानो कि भक्ति का समुद्र मेरे भीतर उमड रहा है "सतु कर्म ज्ञानेभ्यो प्यधिकतरः"

वह भक्ति कर्म ज्ञान योग से भी अधिकतर है 'पुनन्ति कुलानि पृथिवीच' भक्त अपने कुल और सम्पूर्ण पृथिवी को पवित्र करता है सर्व सांसारिक वासनाओंका त्याग विशेष कर काम का त्याग करना और भगवत् चरणों में अतिशय गाढ़ प्रेम, अपनी सर्व वासनाओं के ऊपर भगवत् इच्छा का अधिकार स्थापित करना, अर्थात् जितनी वासना फुरें सर्व भगवत् इच्छा से प्रेरित हों वा भगवत् इच्छा को पूर्ण करने वाली हों और उसके विरुद्ध कोई वासना न फुरने पावे हृदय में भगवत् प्रेमकी अजस्रधारा ऐसी निरन्तर बहती रहे जैसे गंगाका प्रवाह, कभी एक क्षण भी हृदय भगवत् प्रेम से शून्य न रहे और जैसे मीन के लिए जल ही जीवन होता है, वैसे ही भक्ति मार्ग पर चलने वालेके लिए भगवत् प्रेमही जीवन होता है श्रोत्र से भगवत् के गुण श्रवण करना, जिव्हासे उन के गुण कीर्तन करना, हस्तों से पूजा और सेवा करनी पगों से उसके कार्य पूर्ण करने अर्थात् चलना, मुखसे नाम उच्चारण करना तथा भगवत् कथा का पाठ करना नासिका से भगवत् चरण से स्पर्श हुए पुष्पोंकी सुगन्धि लेनी इत्यादि सर्वाङ्गों को भगवत् के अर्पण करना ही

जीवनका उद्देश्य है। मन से स्वरूपका चिन्तन करना, बुद्धि से ध्यान और चित्त से स्मरण और अहंकार से भगवत् पर अपना, मान करना, इस प्रकार आत्मा से आत्म निवेदन, सर्व भगवत् समर्पण करना ही जीवनका आधार है सर्वत्र ही भगवत् केलिये व्याकुल होना भक्तिका मुख्य साधन माना गया है पद्म पुराण में अपनी भक्तिसे अपने भक्तों की भक्ति उत्तम बतलाते हैं:—

मम भक्ताः हिये पार्थः नमे भक्तस्तुते मताः ।
मद्भक्तस्तु ये भक्ता स्तेमे भक्त तमाः मताः ॥

हे पार्थ जो मेरे भक्त हैं वे भक्त नहीं किन्तु जो मेरे भक्तों में के भक्त हैं वे मेरे मत में श्रेष्ठ हैं। भगवान अपने भक्तों केलिये अपने प्रण को छोड़ भक्तों का प्रण पालते हैं जिस प्रकार अपनी प्रतिज्ञा छोड़ भीष्मजी की प्रतिज्ञा पूरी करी इस से परम भक्त भीष्म पितामह पूरा विश्वास कर ये शब्द कहते हैं:—

भजन—आजजो मैं हरि है न शस्त्र गहाऊं॥टेक॥ तो लाजुं गंगा जननी को शान्तनु सुत न कहाऊं। सिन्दन खण्ड सारथिय खगडों कपिध्वज सहित गिराऊं। पाण्डव दल सन्मुख व्है धाऊं सरिता रुधिर वहाऊं। इतनो न करूं शपथ मोय हरिकी छत्री गति नहीं पाऊं। सूरदास रण

भूमि विजय बिन जीवत न पीठ दिखाऊं ॥

इसी प्रकार सच्चिदानन्द श्री पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता सहित नदी तट पर पहुंच कर केवट को नवका लाने की आज्ञादी तो केवट भगवान् का परम भक्त उनकी आज्ञानुसार नवका लाकर उपस्थित हुआ और प्रेम पूर्वक बोला महाराज अपने चरण प्रथम धुलवाके नवका पर आरूढ़ हूजिए क्योंकि आप के चरणों की रजसे पाषाण की शिला बनी हुई स्वर्ग को चली गई ऐसे ही मेरी नवका चलीगई तो मेरा निर्वाह किस पर होगा और मैं अपने कुटुम्ब सहित आपके चरणामृत को पान करूंगा तो हमारा स्वर्ग में वास होगा तो भगवान ने, अपने भक्त की विनय सुनकर वैसा ही किया जब पार उतर कर उसको उतराई देने लगे तो उसने निम्न लिखित प्रेम भरे शब्द कहेः—

श्लोकः—अहंतु नथः पर पार कर्तात्वं वैभवाब्धेः परपार कर्ता । न नाविकां नाविक एव कर्म मौल्यं लभेस्तर्हि कथं तदेमि ॥

त्वत्तो न गृह्णामि यथाह मेद्यो प्राप्यं तथा वैभवता न तत्र । इत्थं प्रकारेण मया त्वयाच धर्म व्यवस्था परिपाल नीया ॥ १

इस का भावार्थ निम्न लिखित कवित्त से समझनाः—

जात पात न्यारी करी हमरी तुम्हारी नाथ केवट के कर्म एक नीके कै निहारिये। तुम तो उतारो भवसागर परमारथ सरिता उतार हम कुटुंब गुज़ारिये॥ नाईते न नाई लेत धोबी ना धुलाई लेत देके उतराई मोहू जात ना बिगारिये। पेशा अधमाई जान आप को उतार दीनो थारे घाट आये नाथ मोहू को उतारिये॥१॥

इसी प्रकार जब भगवान् शिवरी के यहां गए तो जात पात का कुछ ख्याल न कर केवल भक्तिका ही गाढ़ नाता माना जैसा कि अध्यात्म रामायण मे लिखा हैः—

पुंसत्वे स्त्रीत्वे विशेषो वा जाती नामा श्रमोद्भवः।
न कारणं मद्भजने भक्तिरेव हि कारणम्॥
यज्ञदान तपो भिर्वा वेदाध्ययन कर्मभिः।
नैव द्रष्टु महं शक्तो मद्भक्तिः विमुखैः सदा॥

अर्थ—रामजी कहते हैं कि पुरुष, स्त्री, जाति और आश्रम ये मेरे भजन में कोई कारण नहीं केवल भक्ति कारण है और जो मेरी भक्ति से विमुख हैं वे यज्ञ दान तप और वेदाध्ययनादि कर्मों को करके मुझे कभी नहीं देखसक्ते, अब भक्ति विषय में परम भक्त गुसाईं तुलसीदास जीकी पवित्र चौपाई कुछ लिख कर पुस्तक समाप्ति करते हैं॥

चौपाई—नाना कर्म धर्म व्रत दाना।
संयम नियम यज्ञ जप नाना ॥
भूत दया द्विज गुरु सेव कांई।
विद्या विनय विवेक बड़ाई ॥
जहां लग साधन वेद बखानी।
बस कर फल हरि भक्ति भवानी ॥
परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा।
पर निन्दा सम अघन गरिंसा ॥
मेरे मन प्रभु अस विश्वासा।
रामते अधिक रामके दासा ॥
असविचार जो करे सतसंगा।
राम भक्ति तेहि सुलभ विहंगा ॥
भक्ति हीन गुण सुख सब ऐसे।
लवण बिनाबहु व्यञ्जन जैसे ॥
भक्ति हीन विरंचि किन होई।
सब जीवन समप्रिय मोय सोई ॥
भक्तिवन्त अति नीचहु प्राणी।
मोहे प्राण प्रिय सुन मम वाणी ॥

प्रकाशक—
भक्त श्रीकृष्ण
घासीराम गिरदावर
* जींद स्टेट *